अध्याय 15

खाद्य संसाधनों में सुधार
(Improvements in Food Resources)

हम सभी जानते हैं कि सभी जीवधारियों को भोजन की आवश्यकता होती है। भोजन से हमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन तथा खनिज लवण प्राप्त होते हैं। इन सभी तत्वों की आवश्यकता हमारे विकास, वृद्धि तथा स्वास्थ्य के लिए होती है। पौधे तथा जंतु दोनों ही हमारे भोजन के मुख्य स्रोत हैं। अधिकांश भोज्य पदार्थ हमें कृषि तथा पशुपालन से प्राप्त होते हैं।

हम प्रायः समाचार पत्रों में पढ़ते हैं कि कृषि उत्पादन तथा पशु पालन को बढ़ाने के प्रयास हो रहे हैं। यह आवश्यक क्यों है? हम वर्तमान उत्पादन स्तर पर ही क्यों नहीं निर्वाह कर सकते?

भारत की जनसंख्या बहुत अधिक है। हमारे देश की जनसंख्या सौ करोड़ (एक बिलियन) से अधिक है तथा इसमें लगातार वृद्धि हो रही है। इस बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए अधिक अन्न उत्पादन की आवश्यकता होगी। यह वृद्धि अधिक भूमि पर कृषि करने से संभव हो सकती है। परंतु भारत में पहले से ही अत्यधिक स्थान पर खेती होती है। अतः कृषि के लिए और अधिक भूमि की उपलब्धता संभव नहीं है। इसलिए फसल तथा पशुधन के उत्पादन की क्षमता को बढ़ाना आवश्यक है।

अभी तक फसल उत्पादन को बढ़ाने के हमारे प्रयास कुछ सीमा तक सफल रहे हैं। हमने हरित क्रांति द्वारा फसल उत्पादन में वृद्धि की है तथा श्वेत क्रांति द्वारा दूध का उत्पादन बढ़ाया है और उसका अच्छा प्रबंधन भी किया है।

इन क्रांतियों की प्रक्रिया में हमारी प्राकृतिक संपदाओं का बहुत अधिक उपयोग हुआ है। इसके परिणामस्वरूप हमारी प्राकृतिक संपदा को हानि होने के अवसर बढ़ गए हैं जिससे प्राकृतिक संतुलन बिगड़ने का खतरा बढ़ गया है। अतः यह महत्वपूर्ण है कि फसल उत्पादन बढ़ाने के हमारे प्रयास पर्यावरण तथा पर्यावरण को संतुलित बनाए रखने वाले कारकों को क्षति न पहुँचाएँ। इसलिए कृषि तथा पशु पालन के लिए संपूषणीय प्रणालियों को अपनाने की आवश्यकता है।

केवल फसल उत्पादन बढ़ाने तथा उन्हें गोदामों में संचित करने से ही कुपोषण तथा भूख की समस्या का समाधान नहीं हो सकता। लोगों को अनाज खरीदने के लिए धन की आवश्यकता भी होती है। खाद्य सुरक्षा उसके उत्पादन तथा उपलब्धता दोनों पर निर्भर है। हमारे देश की अधिकांश जनसंख्या अपने जीवनयापन के लिए कृषि पर ही निर्भर है। इसलिए कृषि क्षेत्र में लोगों की आय भी बढ़नी चाहिए जिससे कि भूख की समस्या का समाधान हो सके। कृषि से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए हमें वैज्ञानिक प्रबंधन प्रणालियों को अपनाना होगा। संपूषणीय जीवनयापन के लिए मिश्रित खेती, अंतरा फसलीकरण तथा संघटित कृषि प्रणालियाँ अपनानी चाहिए। उदाहरण के लिए पशुधन, कुक्कुट पालन, मत्स्य पालन, मधुमक्खी पालन के साथ कृषि इत्यादि।

अब प्रश्न यह है कि हम फसल तथा पशुधन के उत्पादन को कैसे बढ़ाएँ?

15.1 फसल उत्पादन में उन्नति

ऊर्जा की आवश्यकता के लिए अनाज; जैसे—गेहूँ, चावल, मक्का, बाजरा तथा ज्वार से कार्बोहाइड्रेट प्राप्त होता है। दालें जैसे चना, मटर, उड़द, मूँग, अरहर, मसूर से प्रोटीन प्राप्त होती है और तेल वाले बीजों; जैसे—सोयाबीन, मूँगफली, तिल, अरंड, सरसों, अलसी तथा सूरजमुखी से हमें आवश्यक वसा प्राप्त होती है (चित्र 15.1)। सब्जियाँ, मसाले तथा फलों से हमें विटामिन तथा खनिज लवण, कुछ मात्रा में प्रोटीन, वसा तथा कार्बोहाइड्रेट भी प्राप्त होते हैं। चारा फसलें; जैसे—बर्सीम, जई अथवा सूडान घास का उत्पादन पशुधन के चारे के रूप में किया जाता है।

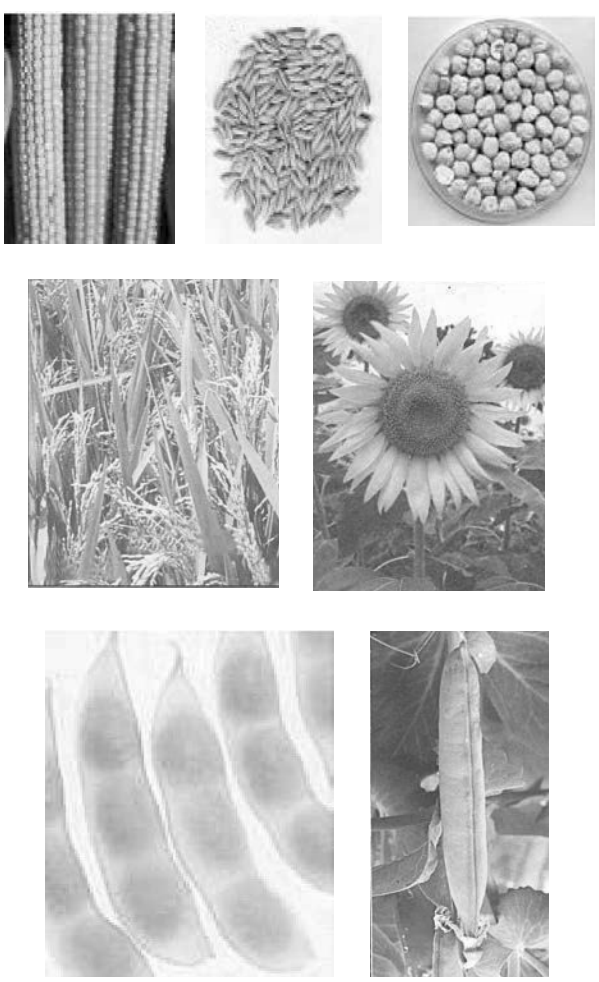

चित्र 15.1: विभिन्न प्रकार की फसलें

प्रश्न

1. *अनाज, दाल, फल तथा सब्जियों से हमें क्या प्राप्त होता है?*

विभिन्न फसलों के लिए विभिन्न जलवायु संबंधी परिस्थितियों, तापमान तथा दीप्तिकाल (photoperiods) की आवश्यकता होती है जिससे कि उनकी समुचित वृद्धि हो सके और वे अपना जीवन चक्र पूरा कर सकें। दीप्तिकाल सूर्य-प्रकाश के काल से संबंधित होता है। पौधों में पुष्पन तथा वृद्धि सूर्य-प्रकाश पर निर्भर करती है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि पौधे सूर्य के प्रकाश में प्रकाश संश्लेषण द्वारा अपना भोजन बनाते हैं। कुछ ऐसी फसलें जिन्हें हम वर्षा ऋतु में उगाते हैं, खरीफ़ फसल कहलाती हैं, जो जून से आरंभ होकर अक्तूबर मास तक होती हैं। कुछ फसलें शीत ऋतु में उगायी जाती हैं, जो नवंबर से अप्रैल मास तक होती हैं। इन फसलों को रबी फसल कहते हैं। धान, सोयाबीन, अरहर, मक्का, मूँग तथा उड़द खरीफ फसलें हैं। गेहूँ, चना, मटर, सरसों तथा अलसी रबी फसलें हैं।

भारत में सन् 1952 से सन् 2010 तक कृषि भूमि में 25% की वृद्धि हुई है जबकि अन्न की पैदावार में चार गुनी वृद्धि हुई है। पैदावार में यह उन्नति कैसे हुई? यदि हम कृषि में शामिल प्रणालियों के विषय में सोचें तो हम उनको तीन चरणों में बाँट सकते हैं। सबसे पहले है बीज का चुनना, दूसरा फसल की उचित देखभाल तथा तीसरा खेतों में उगी फसल की सुरक्षा तथा कटी हुई फसल को हानि से बचाना। इस प्रकार फसल उत्पादन में सुधार की प्रक्रिया में प्रयुक्त गतिविधियों को निम्न प्रमुख वर्गों में बाँटा गया है:

- फसल की किस्मों में सुधार
- फसल-उत्पादन प्रबंधन
- फसल सुरक्षा प्रबंधन

15.1.1 फसल की किस्मों में सुधार

फसलों का उत्पादन अच्छा हो, यह प्रयास फसलों की किस्मों के चयन पर निर्भर करता है। फसल की किस्मों या प्रभेदों के लिए विभिन्न उपयोगी गुणों (जैसे रोगप्रतिरोधक क्षमता, उर्वरक के प्रति अनुरूपता, उत्पादन की गुणवत्ता तथा उच्च उत्पादन) का चयन प्रजनन द्वारा कर सकते हैं। फसल की किस्मों में ऐच्छिक गुणों को संकरण द्वारा डाला जा सकता है। संकरण विधि में विभिन्न आनुवंशिक गुणों वाले पौधों में संकरण करवाते हैं। यह संकरण अंतराकिस्मीय (विभिन्न किस्मों में), अंतरास्पीशीज (एक ही जीनस की दो विभिन्न स्पीशीजों में) अथवा अंतरावंशीय (विभिन्न जेनरा में) हो सकता है। फसल सुधार की दूसरी विधि है ऐच्छिक गुणों वाले जीन का डालना। इसके परिणामस्वरूप आनुवंशिकीय रूपांतरित फसल प्राप्त होती है।

नए प्रभेदों को अपनाने से पहले यह आवश्यक है कि फसल की किस्म विभिन्न परिस्थितियों में, जो विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न होती है, अच्छा उत्पादन दे सकें। किसानों को अच्छी गुणवत्ता वाले विशेष बीज उपलब्ध होने चाहिए अर्थात् बीज उसी किस्म के होने चाहिए जो अनुकूल परिस्थिति में अंकुरित हो सकें।

कृषि प्रणालियाँ तथा फसल उत्पादन मौसम, मिट्टी की गुणवत्ता तथा पानी की उपलब्धता पर निर्भर करते हैं। चूँकि मौसम परिस्थितियाँ, जैसे सूखा तथा बाढ़ का पूर्वानुमान कठिन होता है इसलिए ऐसी किस्में अधिक उपयोगी हैं जो विविध जलवायु परिस्थितियों में भी उग सकें। इसी प्रकार ऐसी किस्में बनाई गई हैं जो उच्च लवणीय मिट्टी में भी उग सकें। किस्मों में सुधार के लिए कुछ कारक हैं:

- उच्च उत्पादन: प्रति एकड़ फसल की उत्पादकता बढ़ाना।
- उन्नत किस्में: फसल उत्पाद की गुणवत्ता, प्रत्येक फसल में भिन्न होती है। दाल में प्रोटीन की गुणवत्ता, तिलहन में तेल की गुणवत्ता और फल तथा सब्जियों का संरक्षण महत्वपूर्ण है।
- जैविक तथा अजैविक प्रतिरोधकता: जैविक (रोग, कीट तथा निमेटोड) तथा अजैविक (सूखा, क्षारता, जलाक्रांति, गरमी, ठंड तथा पाला) पारिस्थितियों के कारण फसल उत्पादन कम हो सकता है। इन परिस्थितियों को सहन कर सकने वाली किस्में फसल उत्पादन में सुधार कर सकती हैं।
- परिपक्वन काल में परिवर्तन: फसल को उगाने से लेकर कटाई तक कम से कम समय लगना आर्थिक दृष्टि से अच्छा है। इससे किसान प्रतिवर्ष अपने खेतों में कई फसलें उगा सकते हैं। कम समय होने के कारण फसल उत्पादन में धन भी कम खर्च होता है। समान परिपक्वन कटाई की प्रक्रिया को सरल बनाता है और कटाई के दौरान होने वाली फसल की हानि कम हो जाती है।
- व्यापक अनुकूलता: व्यापक अनुकूलता वाली किस्मों का विकास करना विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों में फसल उत्पादन को स्थायी करने में सहायक होगा। एक ही किस्म को विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न जलवायु में उगाया जा सकता है।
- ऐच्छिक सस्य विज्ञान गुण: चारे वाली फसलों के लिए लंबी तथा सघन शाखाएँ ऐच्छिक गुण हैं। अनाज के लिए बौने पौधे उपयुक्त हैं ताकि इन फसलों को उगाने के लिए कम पोषकों की आवश्यकता हो। इस प्रकार सस्य विज्ञान वाली किस्में अधिक उत्पादन प्राप्त करने में सहायक होती हैं।

प्रश्न

1. *जैविक तथा अजैविक कारक किस प्रकार फसल उत्पादन को प्रभावित करते हैं ?*
2. *फसल सुधार के लिए ऐच्छिक सस्य विज्ञान गुण क्या हैं?*

15.1.2 फसल उत्पादन प्रबंधन

अन्य कृषि प्रधान देशों के समान भारत में भी कृषि छोटे-छोटे खेतों से लेकर बहुत बड़े फार्मों तक में होती है। इसलिए विभिन्न किसानों के पास भूमि, धन, सूचना तथा तकनीकी की उपलब्धता कम अथवा अधिक होती है। संक्षिप्त में धन अथवा आर्थिक परिस्थितियाँ किसान को विभिन्न कृषि प्रणालियों तथा कृषि तकनीकों को अपनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। योगदान, उच्च निवेश तथा फसल उत्पादन में सह-संबंध है। इस प्रकार किसान की लागत क्षमता फसल तंत्र तथा उत्पादन प्रणालियों का निर्धारण करती है। इसलिए उत्पादन प्रणालियाँ भी विभिन्न स्तर की हो सकती हैं। 'बिना लागत' उत्पादन, 'अल्प लागत' उत्पादन तथा 'अधिक लागत' उत्पादन प्रणालियाँ इनमें सम्मिलित हैं।

15.1.2 (i) *पोषक प्रबंधन*

जैसे हमें विकास, वृद्धि तथा स्वस्थ रहने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है, वैसे ही पौधों को भी वृद्धि के लिए पोषक पदार्थों की आवश्यकता होती है। पौधों को पोषक पदार्थ हवा, पानी तथा मिट्टी से प्राप्त होते हैं। पौधों के लिए अनेक पोषक पदार्थ आवश्यक हैं। हवा से कार्बन तथा ऑक्सीजन, पानी से हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन एवं शेष अन्य पोषक पदार्थ मिट्टी से प्राप्त होते हैं। इन पोषकों में से कुछ की अधिक मात्रा चाहिए इसलिए इन्हें वृहत्-पोषक कहते हैं। शेष पोषकों की आवश्यकता कम मात्रा में होती है इसलिए इन्हें सूक्ष्म-पोषक कहते हैं (सारणी 15.1)।

इन पोषकों की कमी के कारण पौधों की शारीरिक प्रक्रियाओं सहित जनन, वृद्धि तथा रोगों के प्रति प्रवृत्ति पर प्रभाव पड़ता है। अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए मिट्टी में खाद तथा उर्वरक के रूप में इन पोषकों को मिलाना आवश्यक है।

सारणी 15.1 : हवा, पानी तथा मृदा से प्राप्त होने वाले पोषक

स्रोत	पोषक
हवा	कार्बन, ऑक्सीजन
पानी	हाइड्रोजन, ऑक्सीजन
मृदा	(i) *वृहत् पोषक:* नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, कैल्सियम, मैगनीशियम, सल्फर (ii) *सूक्ष्म पोषक:* आयरन, मैंगनीज, बोरॉन, जिंक, कॉपर, मॉलिब्डेनम्, क्लोरीन

प्रश्न

1. *वृहत् पोषक क्या हैं और इन्हें वृहत्-पोषक क्यों कहते हैं?*
2. *पौधे अपना पोषक कैसे प्राप्त करते हैं?*

खाद

खाद में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा अधिक होती है तथा यह मिट्टी को अल्प मात्रा में पोषक प्रदान करते हैं। खाद को जंतुओं के अपशिष्ट तथा पौधों के कचरे के अपघटन से तैयार किया जाता है। खाद मिट्टी को पोषकों तथा कार्बनिक पदार्थों से परिपूर्ण करती है और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाती है। खाद में कार्बनिक पदार्थों की अधिक मात्रा मिट्टी की संरचना में सुधार करती है। इसके कारण रेतीली मिट्टी में पानी को रखने की क्षमता बढ़ जाती है। चिकनी मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की अधिक मात्रा पानी को निकालने में सहायता करती है जिससे पानी एकत्रित नहीं होता।

खाद के बनाने में हम जैविक कचरे का उपयोग करते हैं। इससे उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग की आवश्यकता नहीं होगी तथा इस प्रकार से पर्यावरण

संरक्षण में सहयोग मिलेगा। खाद बनाने की प्रक्रिया में विभिन्न जैव पदार्थ के उपयोगों के आधार पर खाद को निम्न वर्गों में विभाजित किया जाता है:

(i) कंपोस्ट तथा वर्मी-कंपोस्ट: कंपोस्टीकरण प्रक्रिया में कृषि अपशिष्ट पदार्थ; जैसे-पशुधन का मलमूत्र (गोबर आदि), सब्जी के छिलके एवं कचरा, जानवरों द्वारा परित्यक्त चारे, घरेलू कचरे, सीवेज कचरे, फेंके हुए खर-पतवार आदि को गड्ढों में विगलित करते हैं। कंपोस्ट में कार्बनिक पदार्थ तथा पोषक बहुत अधिक मात्रा में होते हैं। कंपोस्ट को केंचुओं द्वारा पौधों तथा जानवरों के अपशिष्ट पदार्थों के शीघ्र निरस्तीकरण की प्रक्रिया द्वारा बनाया जाता है। इसे वर्मी-कंपोस्ट कहते हैं।

(ii) हरी खाद: फसल उगाने से पहले खेतों में कुछ पौधे; जैसे-पटसन, मूँग अथवा ग्वार आदि उगा देते हैं और तत्पश्चात् उन पर हल चलाकर खेत की मिट्टी में मिला दिया जाता है। ये पौधे हरी खाद में परिवर्तित हो जाते हैं जो मिट्टी को नाइट्रोजन तथा फॉस्फोरस से परिपूर्ण करने में सहायक होते हैं।

उर्वरक

उर्वरक व्यावसायिक रूप में तैयार पादप पोषक हैं। उर्वरक नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटैशियम प्रदान करते हैं। इनके उपयोग से अच्छी कायिक वृद्धि (पत्तियाँ, शाखाएँ तथा फूल) होती है और स्वस्थ पौधों की प्राप्ति होती है। अधिक उत्पादन के लिए उर्वरक का भी उपयोग होता है परंतु ये आर्थिक दृष्टि से मँहगे पड़ते हैं।

उर्वरक का उपयोग बड़े ध्यान से करना चाहिए और उसके सदुपयोग के लिए इसकी खुराक की उचित मात्रा, उचित समय तथा उर्वरक देने से पहले तथा उसके बाद की सावधानियों को अपनाना चाहिए। उदाहरण के लिए कभी-कभी उर्वरक अधिक सिंचाई के कारण पानी में बह जाते हैं और पौधे उसका पूरा अवशोषण नहीं कर पाते। उर्वरक की यह अधिक मात्रा जल प्रदूषण का कारण होती है।

जैसा कि हमने पिछले अध्याय में पढ़ा है, उर्वरक का सतत् प्रयोग मिट्टी की उर्वरता को घटाता है। क्योंकि कार्बनिक पदार्थ की पुन: पूर्ति नहीं हो पाती तथा इससे सूक्ष्मजीवों एवं भूमिगत जीवों का जीवन चक्र अवरुद्ध होता है। उर्वरकों के उपयोग द्वारा फसलों का अधिक उत्पादन कम समय में प्राप्त हो सकता है। परंतु यह मृदा की उर्वरता को कुछ समय पश्चात् हानि पहुँचाते हैं। जबकि खाद के उपयोग के लाभ दीर्घावधि हैं।

प्रश्न

1. *मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने के लिए खाद तथा उर्वरक के उपयोग की तुलना कीजिए।*

कार्बनिक खेती, खेती करने की वह पद्धति है जिसमें रासायनिक उर्वरक, पीड़कनाशी, शाकनाशी आदि का उपयोग बहुत कम या बिलकुल नहीं होता। इस पद्धति में अधिकाधिक कार्बनिक खाद, कृषि-अपशिष्ट (पुआल तथा पशुधन) का पुनर्चक्रण, जैविक-कारक जैसे कि नील-हरित शैवाल का संवर्धन, जैविक उर्वरक बनाने में उपयोग किया जाता है। नीम की पत्तियों तथा हल्दी का विशेष रूप से जैव कीटनाशकों के रूप में खाद्य संग्रहण में प्रयोग किया जाता है। कुशल फसलीकरण पद्धति के लिए मिश्रित खेती, अंतर-फसलीकरण तथा फसल चक्र (जैसा कि नीचे अनुभाग 15.1.2(iii) में वर्णित है) आवश्यक हैं। ये फसल तंत्र कीट, पीड़क तथा खरपतवार को नियंत्रित करते हैं और पोषक तत्व भी प्रदान करते हैं।

15.1.2 (ii) *सिंचाई*

भारत में अधिकांश खेती वर्षा पर आधारित है अर्थात् अधिकांश क्षेत्रों में फसल की उपज, समय पर मानसून आने तथा वृद्धिकाल में उचित वर्षा होने पर निर्भर

करती है। इसलिए कम वर्षा होने पर फसल उत्पादन कम हो जाता है। फसल की वृद्धि काल में उचित समय पर सिंचाई करने से संभावित फसल उत्पादन में वृद्धि हो सकती है। इसलिए अधिकाधिक कृषि भूमि को सिंचित करने के लिए बहुत से उपाय किए जाते हैं।

इसे भी जानें

पानी की कमी अथवा वर्षा की अनियमितता के कारण सूखा होता है। वर्षा पर आधारित कृषि को सूखे से बहुत हानि होती है विशेषत: उन क्षेत्रों में जहाँ पर किसान फसल उत्पादन में सिंचाई का उपयोग नहीं करते और केवल वर्षा पर ही निर्भर रहते हैं। हलकी मृदाओं में पानी को संचित रखने की क्षमता कम होती है। इसलिए जिन क्षेत्रों में हलकी मृदा होती है वहाँ पर सूखे के कारण फसलों की बहुत हानि होती है। वैज्ञानिकों ने कुछ फसलों की ऐसी किस्में तैयार कर ली हैं जो सूखे की स्थिति को सहन कर सकती हैं।

भारत में अनेक पानी के स्रोत हैं और विभिन्न प्रकार की जलवायु है। इन परिस्थितियों में, विभिन्न प्रकार के सिंचाई की विधियाँ पानी के स्रोत की उपलब्धता के आधार पर अपनायी जाती हैं। इन स्रोतों के कुछ उदाहरण कुएँ, नहरें, नदियाँ तथा तालाब हैं।

- कुएँ: कुएँ दो प्रकार के होते हैं–खुदे हुए कुएँ तथा नलकूप। खुदे हुए कुएँ द्वारा भूमिगत जल स्तरों में स्थित पानी को एकत्रित किया जाता है। नलकूप में पानी गहरे जल स्तरों से निकाला जाता है। इन कुओं से सिंचाई के लिए पानी को पंप द्वारा निकाला जाता है।
- नहरें: यह सिंचाई का एक बहुत विस्तृत तथा व्यापक तंत्र हैं। इनमें पानी एक या अधिक जलाशयों अथवा नदियों से आता है। मुख्य नहर से शाखाएँ निकलती हैं जो विभाजित होकर खेतों में सिंचाई करती हैं।
- नदी जल उठाव प्रणाली: जिन क्षेत्रों में जलाशयों से कम पानी मिलने के कारण नहरों का बहाव अनियमित अथवा अपर्याप्त होता है वहाँ जल उठाव प्रणाली अधिक उपयोगी रहती है। नदियों के किनारे स्थित खेतों में सिंचाई करने के लिए नदियों से सीधे ही पानी निकाला जाता है।
- तालाब: छोटे जलाशय जो छोटे क्षेत्रों में बहे हुए पानी का संग्रह करते हैं, तालाब का रूप ले लेते हैं।

कृषि में पानी की उपलब्धि बढ़ाने के लिए आधुनिक विधियाँ, जैसे वर्षा के पानी का संग्रहण तथा जल विभाजन का उचित प्रबंधन द्वारा उपयोग किया जाता है। इसके लिए छोटे बाँध बनाने होते हैं जिससे कि भूमि के नीचे जलस्तर बढ़ जाए। ये छोटे बाँध वर्षा के पानी को बहने से रोकते हैं तथा मृदा अपरदन को भी कम करते हैं।

15.1.2 (iii) *फसल पैटर्न*

अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए फसल उगाने की विभिन्न विधियों का उपयोग कर सकते हैं।

मिश्रित फसल में दो अथवा दो से अधिक फसलों को एक साथ ही एक खेत में उगाते हैं। जैसे कि– गेहूँ+चना अथवा गेहूँ+सरसों अथवा मूँगफली+सूर्यमुखी। इससे हानि होने की संभावना कम हो जाती है क्योंकि फसल के नष्ट हो जाने पर भी फसल उत्पादन की आशा बनी रहती है।

अंतराफसलीकरण में दो अथवा दो से अधिक फसलों को एक साथ एक ही खेत में निर्दिष्ट पैटर्न पर उगाते हैं (चित्र 15.2)। कुछ पंक्तियों में एक प्रकार की फसल तथा उनके एकांतर में स्थित दूसरी पंक्तियों में दूसरी प्रकार की फसल उगाते हैं। इसके उदाहरण हैं: सोयाबीन+मक्का अथवा बाजरा+लोबिया। फसल का चुनाव इस प्रकार करते हैं कि उनकी पोषक तत्वों की आवश्यकताएँ भिन्न-भिन्न हों जिससे पोषकों का अधिकतम उपयोग हो सके। इस विधि

द्वारा पीड़क व रोगों को एक प्रकार की फसल के सभी पौधों में फैलने से रोका जा सकता है। इस प्रकार दोनों फसलों से अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

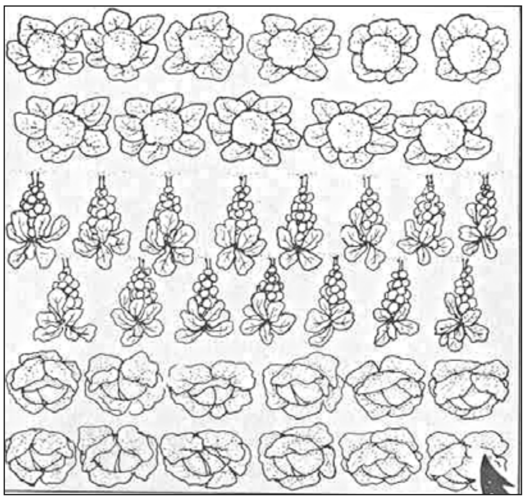

चित्र 15.2: अंतराफसलीकरण

किसी खेत में क्रमवार पूर्व नियोजित कार्यक्रम के अनुसार विभिन्न फसलों के उगाने को फसल चक्र कहते हैं। परिपक्वन काल के आधार पर विभिन्न फसल सम्मिश्रण के लिए फसलचक्र अपनाया जाता है। एक कटाई के बाद कौन-सी फसल उगानी चाहिए यह नमी तथा सिंचाई की उपलब्धता पर निर्भर करता है। यदि फसल चक्र उचित ढंग से अपनाया जाए तो एक वर्ष में दो अथवा तीन फसलों से अच्छा उत्पादन किया जा सकता है।

15.1.3 फसल सुरक्षा प्रबंधन

खेतों में फसल खर-पतवार, कीट, पीड़क तथा रोगों से प्रभावित होती हैं। यदि समय रहते खर-पतवार तथा पीड़कों को नियंत्रित नहीं किया जाए तो वे फसलों को बहुत हानि पहुँचाते हैं।

खर-पतवार कृषि योग्य भूमि में अनावश्यक पौधे होते हैं उदाहरणत: गोखरू (जैंथियम), गाजर घास (पारथेनियम), व मोथा (साइरेनस रोटेंडस)। ये खर-पतवार भोजन, स्थान तथा प्रकाश के लिए स्पर्धा करते हैं। खर-पतवार पोषक तत्व भी लेते हैं जिससे फसलों की वृद्धि कम हो जाती है। इसलिए अच्छी पैदावार के लिए प्रारंभिक अवस्था में ही खर-पतवार को खेतों में से निकाल देना चाहिए।

प्राय: कीट-पीड़क तीन प्रकार से पौधों पर आक्रमण करते हैं: (1) ये मूल, तने तथा पत्तियों को काट देते हैं, (2) ये पौधे के विभिन्न भागों से कोशिकीय रस चूस लेते हैं, तथा (3) ये तने तथा फलों में छिद्र कर देते हैं। इस प्रकार ये फसल को खराब कर देते हैं और फसल उत्पादन कम हो जाता है।

पौधों में रोग बैक्टीरिया, कवक तथा वाइरस जैसे रोग कारकों द्वारा होता है। ये मिट्टी, पानी तथा हवा में उपस्थित रहते हैं और इन माध्यमों द्वारा ही पौधों में फैलते हैं।

खर-पतवार, कीट तथा रोगों पर नियंत्रण कई विधियों द्वारा किया जा सकता है। इनमें से सर्वाधिक प्रचलित विधि पीड़कनाशी रसायन का उपयोग है। इसके अंतर्गत शाकनाशी, कीटनाशी तथा कवकनाशी आते हैं। इन रसायनों को फसल के पौधों पर छिड़कते हैं अथवा बीज और मिट्टी के उपचार के लिए उपयोग करते हैं। लेकिन इनके अधिकाधिक उपयोग से बहुत-सी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं, जैसे कि ये कई पौधों तथा जानवरों के लिए विषैले हो सकते हैं और पर्यावरण प्रदूषण के कारण बन जाते हैं।

यांत्रिक विधि द्वारा खर-पतवारों को हटाना भी एक विधि है। निरोधक विधियाँ; जैसे-समय पर फसल उगाना, उचित क्यारियाँ तैयार करना, अंतराफसलीकरण तथा फसल चक्र खर-पतवार को नियंत्रित करने में सहायक होती हैं। पीड़कों पर नियंत्रण पाने के लिए प्रतिरोध क्षमता वाली किस्मों का उपयोग तथा ग्रीष्म काल में हल से जुताई कुछ निरोधक विधियाँ हैं। इस विधि में खर-पतवार तथा पीड़कों को नष्ट करने के लिए गर्मी के मौसम में गहराई तक हल चलाया जाता है।

प्रश्न

1. *निम्नलिखित में से कौन-सी परिस्थिति में सबसे अधिक लाभ होगा? क्यों ?*
   (a) *किसान उच्च कोटि के बीज का उपयोग करें, सिंचाई ना करें अथवा उर्वरक का उपयोग ना करें।*
   (b) *किसान सामान्य बीजों का उपयोग करें, सिंचाई करें तथा उर्वरक का उपयोग करें।*
   (c) *किसान अच्छी किस्म के बीज का प्रयोग करें, सिंचाई करें, उर्वरक का उपयोग करें तथा फसल सुरक्षा की विधियाँ अपनाएँ।*

क्रियाकलाप 15.1

- किसी पास के बगीचे अथवा खेत में जाएं और उसमें पाए जाने वाले खरपतवार, पुष्प या फसल की सूची बनाएं। इन पुष्प या फसलों पर अगर कोई कीट–पीड़क लगा हो तो उसकी सूची भी बनाएं।

अनाज का भंडारण

कृषि उत्पाद के भंडारण में बहुत हानि हो सकती है। इस हानि के जैविक कारक कीट, कृंतक, कवक, चिंचड़ी तथा जीवाणु हैं तथा इस हानि के अजैविक कारक भंडारण के स्थान पर उपयुक्त नमी व ताप का अभाव हैं। ये कारक उत्पाद की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, वजन कम कर देते हैं तथा अंकुरण करने की क्षमता कम कर देते हैं। उत्पाद को बदरंग कर देते हैं। ये सब लक्षण बाजार में उत्पाद की कीमत को कम कर देते हैं। इन कारकों पर नियंत्रण पाने के लिए उचित उपचार और भंडारण का प्रबंधन होना चाहिए।

निरोधक तथा नियंत्रण विधियों का उपयोग भंडारण करने से पहले किया जाता है। इन विधियों के भंडारण से पहले उत्पाद की नियंत्रित सफाई को अच्छी तरह सुखाना (पहले सूर्य के प्रकाश में और फिर छाया में) तथा धूमक (fumigation) का उपयोग, जिससे कि पीड़क मर जाए, सम्मिलित हैं।

प्रश्न

1. *फसल की सुरक्षा के लिए निरोधक विधियाँ तथा जैव नियंत्रण क्यों अच्छा समझा जाता है?*
2. *भंडारण की प्रक्रिया में कौन-से कारक अनाज की हानि के लिए उत्तरदायी हैं?*

क्रियाकलाप 15.2

- अनाज या दालों के दानों या बीजों को एकत्रित करें तथा इनकी बुवाई और फसल काटने के मौसम की जानकारी भी एकत्रित करें।

15.2 पशुपालन

पशुधन के प्रबंधन को पशुपालन कहते हैं। इसके अंतर्गत बहुत-से कार्य; जैसे–भोजन देना, प्रजनन तथा रोगों पर नियंत्रण करना आता है। जनसंख्या वृद्धि तथा रहन-सहन के स्तर में वृद्धि के कारण अंडों, दूध तथा मांस की खपत भी बढ़ रही है। पशुधन के लिए

सारणी 15.2: पशु उत्पादों का पोषक मान (प्रतिशत में)

पशु उत्पाद	पोषक तत्वों की प्रतिशतता (%)					
	वसा	**प्रोटीन**	**शक्कर**	**खनिज**	**जल**	**विटामिन**
दूध (गाय)	3.60	4.00	4.50	0.70	87.20	B1, B2, B12, D, E
अंडा	12.00	13.00	*	1.00	74.00	B2, D
मांस	3.60	21.10	*	1.10	74.20	B2, B12
मछली	2.50	19.00	*	1.30	77.20	नियासीन D, A

*बहुत कम मात्रा में उपस्थित

मानवीय व्यवहार के प्रति जागरूकता होने के कारण पशुधन खेती में कुछ नई परेशानियाँ भी आ गई हैं। इसलिए पशुधन उत्पादन बढ़ाने व उसमें सुधार की आवश्यकता है।

15.2.1 पशु कृषि

पशुपालन के दो उद्देश्य हैं: दूध देने वाले तथा कृषि कार्य (हल चलाना, सिंचाई तथा बोझा ढोने) के लिए पशुओं को पालना। भारतीय पालतू पशुओं की दो मुख्य स्पीशीज़ हैं: गाय (बॉस इंडिकस), भैंस (बॉस बुवेलिस)। दूध देने वाली मादाओं को दुधारू पशु कहते हैं।

दूध उत्पादन, पशु के दुग्धस्रवण के काल पर कुछ सीमा तक निर्भर करता है। जिसका अर्थ है बच्चे के जन्म पश्चात् दूध उत्पादन का समय काल। इस प्रकार दूध उत्पादन दुग्धस्रवण काल को बढ़ाने से बढ़ सकता है। लंबे समय तक दुग्धस्रवण काल के लिए विदेशी नस्लों जैसे जर्सी, ब्राउन स्विस का चुनाव करते हैं। देशी नस्लों जैसे रेडसिंधी, साहीवाल (चित्र 15.3) में रोग प्रतिरोधक क्षमता बहुत अधिक होती है। यदि इन दोनों नस्लों में संकरण कराया जाए तो एक ऐसी संतति प्राप्त होगी जिसमें दोनों ऐच्छिक गुण (रोग प्रतिरोधक क्षमता व लंबा दुग्धस्रवण काल) होंगे।

(a) रेडसिंधी

(b) साहीवाल

चित्र 15.3: *भारतीय नस्ल की गायें*

प्रश्न

1. पशुओं की नस्ल सुधार के लिए प्रायः कौन-सी विधि का उपयोग किया जाता है और क्यों ?

क्रियाकलाप _____________ 15.3

- पशुधन फार्म पर जाएँ और निम्नलिखित की ओर ध्यान दें।
- पशुओं की संख्या तथा विभिन्न प्रकार की नस्लों की संख्या।
- विभिन्न नस्लों से प्रतिदिन प्राप्त दूध।

उत्पादन की मात्रा मानवीय व्यवहार-आधारित पशुपालन में पशुओं के स्वास्थ्य तथा स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए गाय तथा भैंस के शरीर की उचित सफाई तथा आवास की आवश्यकता होती है। पशु के शरीर पर झड़े हुए बाल तथा धूल को हटाने के लिए नियमित रूप से पशु की सफाई करनी चाहिए। उनका आवास छतदार तथा रोशनदान युक्त होना चाहिए। ऐसे आवास उन्हें वर्षा, गर्मी तथा सर्दी से बचाते हैं। आवास का फर्श ढलवा होना चाहिए जिससे कि वह साफ और सूखा रहे।

दूध देने वाले पशु (डेयरी पशु) के आहार की आवश्यकता दो प्रकार की होती है: (a) एक प्रकार का आहार जो उसके स्वास्थ्य को अच्छा बनाए रखे तथा (b) दूसरा वह जो दूध उत्पादन को बढ़ाए। इसकी आवश्यकता दुग्धस्रवण काल के समय होती है। पशु आहार के अंतर्गत आते हैं: (a) मोटा चारा (रुसांश) जो प्रायः मुख्यतः रेशे होते हैं तथा (b) सांद्र जिनमें रेशे कम होते हैं और प्रोटीन तथा अन्य पोषक तत्व अधिक होते हैं। पशु को एक संतुलित आहार की आवश्यकता होती है जिसमें उचित मात्रा में सभी पोषक तत्व हों। ऐसे पोषक तत्वों के अतिरिक्त कुछ सूक्ष्म पोषक तत्व भी मिलाए जाते हैं जो दुधारू पशुओं को स्वस्थ रखते हैं तथा दूध उत्पादन को बढ़ाते हैं।

पशु अनेक प्रकार के रोगों से ग्रसित हो सकते हैं जिनके कारण उनकी दूध उत्पादन क्षमता में कमी अथवा उनकी मृत्यु भी हो सकती है। एक स्वस्थ पशु नियमित रूप से खाता है और ठीक ढंग से बैठता व उठता है। पशु के बाह्य परजीवी तथा अंत:परजीवी दोनों ही होते हैं। बाह्य परजीवी त्वचा पर रहते हैं जिनसे पशु को त्वचा रोग हो सकते हैं। अंत:परजीवी; जैसे–कीड़े, आमाशय तथा आँत को तथा पर्ण कृमि (फलूक) यकृत को प्रभावित करते हैं। संक्रामक रोग बैक्टीरिया तथा वाइरस के कारण होते हैं। अनेक विषाणु तथा जीवाणु जनित रोगों से पशुओं को बचाने के लिए टीका लगाया जाता है।

15.2.2 कुक्कुट (मुर्गी पालन)

अंडे व कुक्कुट मांस के उत्पादन को बढ़ाने के लिए मुर्गी पालन किया जाता है। इसलिए कुक्कुट पालन में उन्नत मुर्गी की नस्लें विकसित की जाती हैं। अंडों के लिए अंडे देने वाली (लेअर) मुर्गी पालन किया जाता है तथा मांस के लिए ब्रौलर को पाला जाता है।

एसिल

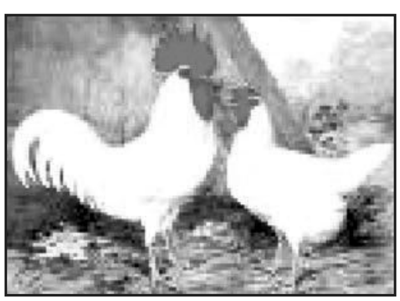
लेगहार्न

चित्र 15.4

निम्नलिखित गुणों के लिए नयी–नयी किस्में विकसित की जाती हैं। नयी किस्में बनाने के लिए देशी जैसे एसिल तथा विदेशी जैसे लेगहार्न नस्लों का संकरण कराया जाता है।

(i) चूज़ों की संख्या तथा गुणवत्ता;
(ii) छोटे कद के ब्रोलर माता–पिता द्वारा चूज़ों के व्यावसायिक उत्पादन हेतु;
(iii) गर्मी अनुकूलन क्षमता/उच्च तापमान को सहने की क्षमता;
(iv) देखभाल में कम खर्च की आवश्यकता;
(v) अंडे देने वाले तथा ऐसी क्षमता वाले पक्षी जो कृषि के उपोत्पाद (agricultural by-products) से प्राप्त सस्ते रेशेदार आहार का उपभोग कर सकें।

प्रश्न

1. निम्नलिखित कथन की विवेचना कीजिए– ''यह रुचिकर है कि भारत में कुक्कुट, अल्प रेशे के खाद्य पदार्थों को उच्च पोषकता वाले पशु प्रोटीन आहार में परिवर्तन करने के लिए सबसे अधिक सक्षम है। अल्प रेशे के खाद्य पदार्थ मनुष्यों के लिए उपयुक्त नहीं होते हैं।''

अंडों तथा ब्रौलर का उत्पादन

ब्रौलर चूज़ों को अच्छी वृद्धि दर तथा अच्छी आहार दक्षता के लिए विटामिन से प्रचुर आहार मिलते हैं। उनकी मृत्यु दर कम रखने और उनके पंख तथा मांस की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए सावधानी बरती जाती है। उन्हें ब्रौलर के रूप में उत्पादित किया जाता है तथा मांस के प्रयोजन के लिए विपणन किया जाता है।

मुर्गी पालन में अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए अच्छी प्रबंधन प्रणालियाँ बहुत आवश्यक हैं। इसके अंतर्गत इनके आवास में उचित ताप तथा स्वच्छता का निर्धारण करके कुक्कुट आहार की गुणवत्ता को बनाए रखा जाता है। इनके साथ–साथ रोगों तथा पीड़कों पर नियंत्रण तथा उनसे बचाव करना भी शामिल है।

ब्रौलर की आवास, पोषण तथा पर्यावरणीय आवश्यकताएँ अंडे देने वाले कुक्कुटों से कुछ भिन्न होती हैं। ब्रौलर के आहार में प्रोटीन तथा वसा प्रचुर मात्रा में होता है। कुक्कुट आहार में विटामिन A तथा विटामिन K की मात्रा भी अधिक रखी जाती है।

जीवाणु, विषाणु, कवक, परजीवी तथा पोषणहीनता के कारण मुर्गियों में कई प्रकार के रोग हो सकते हैं। अतः सफाई तथा स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना चाहिए। इसके लिए नियमित रूप से रोगाणुनाशी पदार्थों का छिड़काव आवश्यक है मुर्गियों को संक्रामक रोगों से बचाने के लिए टीका लगवाना चाहिए जिससे महामारी से ये ग्रसित न हों। इन सावधानियों के बरतने से, रोगों के फैलने की दशा में, कुक्कुट को न्यूनतम हानि होती है।

प्रश्न

1. *पशुपालन तथा कुक्कुट पालन के प्रबंधन प्रणाली में क्या समानता है ?*
2. *ब्रौलर तथा अंडे देने वाली लेयर में क्या अंतर है। इनके प्रबंधन के अंतर को भी स्पष्ट करो।*

क्रियाकलाप 15.4

- कुक्कुट पालन केंद्र में जाओ। वहाँ विभिन्न प्रकार की नस्लों का अवलोकन करो।
- उनको दिए जाने वाले आहार, उनके आवास तथा प्रकाश सुविधाओं को नोट करो। अंडे देने वाली लेअर तथा ब्रौलर को पहचानो।

15.2.3 मत्स्य उत्पादन (मछली उत्पादन)

हमारे भोजन में मछली प्रोटीन का एक समृद्ध स्रोत है। मछली उत्पादन में पखयुक्त मछलियाँ, कवचीय मछलियाँ जैसे प्रॉन तथा मोलस्क सम्मिलित हैं। मछली प्राप्त करने की दो विधियाँ हैं: एक प्राकृतिक स्रोत (जिसे मछली पकड़ना कहते हैं) तथा दूसरा स्रोत मछली पालन (या मछली संवर्धन)।

मछलियों के जल स्रोत समुद्री जल तथा ताज़ा जल (अलवणीय जल) हैं। अलवणीय जल नदियों तथा तालाबों में होता है। इसलिए मछली पकड़ना तथा मछली संवर्धन समुद्र तथा ताज़े जल के पारिस्थितिक तंत्रों में किया जा सकता है।

15.2.3 (i) *समुद्री मत्स्यकी*

भारत का समुद्री मछली संसाधन क्षेत्र 7500 किलोमीटर समुद्री तट तथा इसके अतिरिक्त समुद्र की गहराई तक है। सर्वाधिक प्रचलित समुद्री मछलियाँ पॉमफ्रेट, मैकर्ल, टुना, सारडाइन, तथा बांबेडॉक हैं। समुद्री मछली पकड़ने के लिए विभिन्न प्रकार के जालों का उपयोग मछली पकड़ने वाली नावों से किया जाता है। सैटेलाइट तथा प्रतिध्वनि गभीरतामापी से खुले समुद्र में मछलियों के बड़े समूह का पता लगाया जा सकता है तथा इन सूचनाओं का उपयोग कर मछली का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

कुछ आर्थिक महत्त्व वाली समुद्री मछलियों का समुद्री जल में संवर्धन भी किया जाता है। इनमें प्रमुख हैं : मुलेट, भेटकी तथा पर्लस्पॉट (पखयुक्त मछलियाँ), कवचीय मछलियाँ जैसे झींगा (Prawn) (चित्र 15.5), मस्सल तथा ऑएस्टर, एवं साथ ही समुद्री खर-पतवार। ऑएस्टर का संवर्धन मोतियों को प्राप्त करने के लिए भी किया जाता है।

भविष्य में समुद्री मछलियों का भंडार (stock) कम होने की अवस्था में इन मछलियों की पूर्ति संवर्धन के द्वारा हो सकती है। इस प्रणाली को समुद्री संवर्धन (मेरीकल्चर) कहते हैं।

मेक्रोब्रेकियम रोजेन बर्गी (ताज़ा पानी)

पीनस मोनडोन *(समुद्री)*

चित्र 15.5: *ताज़ा पानी व समुद्री झींगे*

15.2.3 (ii) *अंतःस्थली मत्स्यकी*

ताज़ा जल के स्रोत नाले, तालाब, पोखर तथा नदियाँ हैं। खारे जल के संसाधन, जहाँ समुद्री जल तथा ताजा जल मिश्रित होते हैं जैसे कि नदी मुख (एस्चुरी) तथा

लैगून भी महत्वपूर्ण मत्स्य भंडारण हैं। जब मछलियों का प्रग्रहण अंत:स्थली वाले स्रोतों पर किया जाता है तो उत्पादन अधिक नहीं होता। इन स्रोतों से अधिकांश मछली उत्पादन जल संवर्धन द्वारा ही होता है।

मछली संवर्धन कभी-कभी धान की फसल के साथ भी किया जाता है। अधिक मछली संवर्धन मिश्रित मछली संवर्धन तंत्र से किया जा सकता है। इस प्रक्रिया में देशी तथा आयातित प्रकार की मछलियों का प्रयोग किया जाता है।

ऐसे तंत्र में एक ही तालाब में 5 अथवा 6 मछलियों की स्पीशीज़ का प्रयोग किया जाता है। इनमें ऐसी मछलियों को चुना जाता है जिनमें आहार के लिए प्रतिस्पर्धा न हो अथवा उनके आहार भिन्न-भिन्न हों। इसके परिणामस्वरूप तालाब के प्रत्येक भाग में उपलब्ध आहार का प्रयोग हो जाता है। जैसे कटला मछली जल की सतह से अपना भोजन लेती है। रोहु मछली तालाब के मध्य क्षेत्र से अपना भोजन लेती है। मृगल तथा कॉमन कार्प तालाब की तली से भोजन लेती हैं। ग्रास कार्प खर-पतवार खाती है। इस प्रकार ये सभी मछलियाँ साथ-साथ रहते हुए भी बिना स्पर्धा के अपना-अपना आहार लेती हैं (चित्र 15.6)। इससे तालाब से मछली के उत्पादन में वृद्धि होती है।

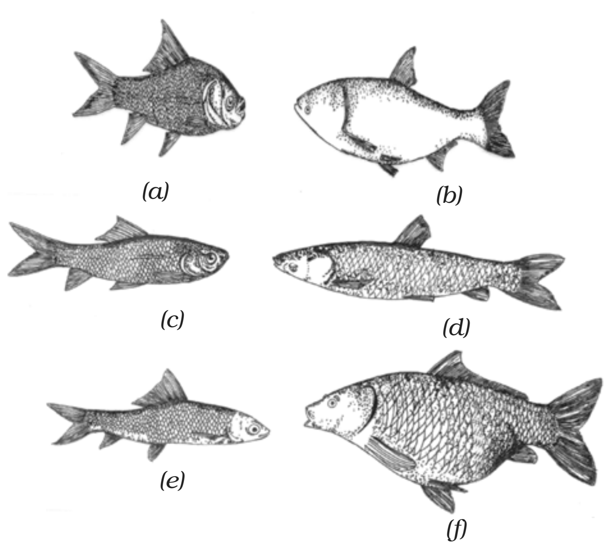

चित्र 15.6: (a) कटला, (b) सिल्वर कार्प, (c) रोहु, (d) ग्रास कार्प, (e) मृगल, (f) कॉमन कार्प

मिश्रित मछली संवर्धन में एक समस्या यह है कि इनमें से कई मछलियां केवल वर्षा ऋतु में ही जनन करती हैं। यहाँ तक कि यदि मत्स्य डिंभ देशी नस्ल से लिए जाएँ तो अन्य स्पीशीज़ के डिंभों के साथ मिल सकते हैं। अत: मछली संवर्धन के लिए अच्छी गुणवत्ता वाले डिंभों का उपलब्ध न होना, एक गंभीर समस्या है। इस समस्या के समाधान के लिए, ऐसी विधियाँ खोजी जा रही हैं कि तालाब में इन मछलियों का संवर्धन हार्मोन के उपयोग द्वारा किया जा सके। इससे ऐच्छिक मात्रा में शुद्ध मछली के डिंभ प्राप्त होते रहेंगे।

प्रश्न

1. *मछलियाँ कैसे प्राप्त करते हैं?*
2. *मिश्रित मछली संवर्धन के क्या लाभ हैं?*

क्रियाकलाप _____________ 15.5

- मछलियों के जनन काल में मछली फार्म में जाओ और निम्नलिखित का अवलोकन करो:
  (1) तालाब में मछलियों की विभिन्न किस्में।
  (2) तालाबों के प्रकार।
  (3) फार्म में प्रयुक्त आहार में शामिल तत्व।
  (4) ज्ञात करो कि फार्म की मछली उत्पादन क्षमता क्या है?

15.2.4 मधुमक्खी पालन

मधु या शहद का सर्वत्र उपयोग होता है अत: इसके लिए मधुमक्खी पालन का उद्यम एक कृषि उद्योग बन गया है। चूंकि मधुमक्खी पालन में पूँजी निवेश कम होता है, इसलिए किसान इसे धनार्जन का अतिरिक्त साधन मानते हैं। शहद के अतिरिक्त मधुमक्खी के छत्ते मोम के बहुत अच्छे स्रोत हैं। मोम का उपयोग औषधि तैयार करने में किया जाता है।

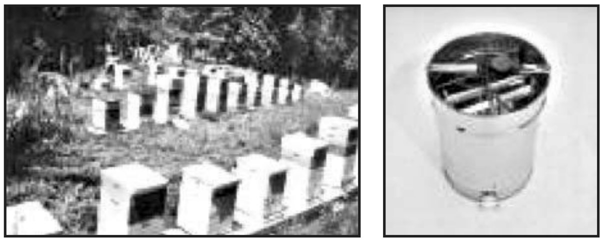

(a) (b)

चित्र 15.7: (a) मधुमक्खी के छत्तों की मधुवाटिका में व्यवस्था, (b) मधु निष्कर्षक

व्यावसायिक स्तर पर मधु उत्पादन के लिए देशी किस्म की मक्खी *ऐपिस सेरना इंडिका,* (सामान्य भारतीय मक्खी), *ऐपिस डोरसेटा* (एक शैल मक्खी) तथा ऐपिस फ्लोरी (*लिटिल* मक्खी) का प्रयोग करते हैं। एक इटली–मक्खी *(ऐपिस मेलीफेरा)* का प्रयोग मधु के उत्पादन को बढ़ाने के लिए किया जाता है। अत: व्यावसायिक मधु उत्पादन में इस मक्खी का प्राय: उपयोग किया जाता है।

इटली–मक्खी में मधु एकत्र करने की क्षमता बहुत अधिक होती है। वे डंक भी कम मारती हैं। वे निर्धारित छत्ते में काफी समय तक रहती है और प्रजनन तीव्रता से करती है। व्यावसायिक मधु उत्पादन के लिए मधुवाटिका अथवा मधुमक्खी फार्म बनाए गए हैं।

मधु की कीमत अथवा गुणवत्ता मधुमक्खियों के चरागाह अर्थात उनको मधु एकत्र करने के लिए उपलब्ध फूलों पर निर्भर करती है। मधुमक्खियाँ फूलों से मकरंद तथा पराग एकत्र करती हैं। चरागाह की पर्याप्त उपलब्धता के अतिरिक्त फूलों की किस्में मधु के स्वाद को निर्धारित करती हैं।

प्रश्न

1. *मधु उत्पादन के लिए प्रयुक्त मधुमक्खी में कौन-से ऐच्छिक गुण होने चाहिए ?*
2. *चरागाह क्या है और ये मधु उत्पादन से कैसे संबंधित है ?*

आपने क्या सीखा

- फसल के लिए अनेकों पोषक आवश्यक हैं। हवा से कार्बन तथा ऑक्सीजन, पानी से हाईड्रोजन तथा ऑक्सीजन एवं मिट्टी से शेष पोषक प्राप्त होते हैं। इन पोषकों में से कुछ पोषकों की मात्रा अधिक चाहिए इसलिए इन्हें वृहत्–पोषक कहते हैं। शेष अन्य पोषक कम मात्रा में चाहिए, जिन्हें सूक्ष्म–पोषक कहते हैं।
- फसल के लिए पोषकों के मुख्य स्रोत खाद तथा उर्वरक हैं।
- कार्बनिक कृषि प्रणालियों में उर्वरकों, पीड़कनाशकों तथा शाकनाशकों का निम्नतम या बिलकुल प्रयोग नहीं किया जाता है। इन प्रणालियों में स्वस्थ फसल तंत्र के साथ कार्बनिक खादों, पुनर्चक्रित अपशिष्टों तथा जैव–कारकों का अधिकतम उपयोग होता है।
- एक विशेष फार्म में फसल उत्पादन तथा पशुपालन आदि में बढ़ावा देने वाली खेती को मिश्रित खेती तंत्र कहते हैं।
- मिश्रित फसल में दो अथवा दो से अधिक फसलों को एक ही खेत में एक साथ उगाते हैं।

- दो अथवा दो से अधिक फसलों को निश्चित कतार पैटर्न में उगाने को अंतराफसलीकरण कहते हैं।
- एक ही खेत में विभिन्न फसलों को पूर्व नियोजित अनुक्रम में उगाएँ तो उसे फसल चक्र कहते हैं।
- उच्च उत्पादन, अच्छी गुणवत्ता जैविक व अजैविक कारकों के प्रति प्रतिरोधिता, अल्प परिपक्वन काल तथा बदलती परिस्थितियों के लिए अनुकूल तथा ऐच्छिक सस्य विज्ञान गुण के लिए नस्ल सुधार की आवश्यकता है।
- फार्म पशुओं के लिए उचित देखभाल तथा प्रबंधन जैसे कि आवास, आहार, जनन, तथा रोगों पर नियंत्रण की आवश्यकता होती है। इसे पशुपालन कहते हैं।
- कुक्कुट पालन घरेलू मुर्गियों की संख्या को बढ़ाने के लिए करते हैं। कुक्कुट पालन के अंतर्गत अंडों का उत्पादन तथा मुर्गों के मांस के लिए ब्रौलर उत्पादन हैं।
- कुक्कुट पालन में उत्पादन को बढ़ाने तथा उन्नत किस्म की नस्लों के लिए भारतीय (देशी) तथा बाह्य नस्लों में संकरण कराते हैं।
- समुद्र तथा अंत:स्थली स्रोतों से मछलियाँ प्राप्त कर सकते हैं।
- मछली उत्पादन बढ़ाने के लिए उनका संवर्धन समुद्र तथा अंत:स्थली पारिस्थितिक प्रणालियों में कर सकते हैं।
- समुद्री मछलियों को पकड़ने के लिए प्रतिध्वनि गभीरतामापी तथा उपग्रह द्वारा निर्देशित मछली पकड़ने के जाल का प्रयोग करते हैं।
- मिश्रित मछली संवर्धन तंत्र प्राय: मत्स्य पालन के लिए अपनाते हैं।
- मधुमक्खी पालन मधु तथा मोम को प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

अभ्यास

1. फसल उत्पादन की एक विधि का वर्णन करो जिससे अधिक पैदावार प्राप्त हो सके।
2. खेतों में खाद तथा उर्वरक का उपयोग क्यों करते हैं?
3. अंतराफसलीकरण तथा फसल चक्र के क्या लाभ हैं?
4. आनुवंशिक फेरबदल क्या हैं? कृषि प्रणालियों में ये कैसे उपयोगी हैं?
5. भंडार गृहों (गोदामों) में अनाज की हानि कैसे होती है?
6. किसानों के लिए पशु पालन प्रणालियाँ कैसे लाभदायक हैं?
7. पशु पालन के क्या लाभ हैं?
8. उत्पादन बढ़ाने के लिए कुक्कुट पालन, मत्स्य पालन तथा मधुमक्खी पालन में क्या समानताएँ हैं?
9. प्रग्रहण मत्स्यन, मेरीकल्चर तथा जल संवर्धन में क्या अंतर है?